

उत्कण्ठा की वृद्धि

भगवान् प्रत्येक जीव को अपनी ओर आकर्षित करते रहते हैं । किसीको कहीं भी कभी चैन से नहीं बैठने देते, जबतक वह उनके पास पहुँच न जाय । परन्तु साधारण लोग उस आकर्षण को नहीं जानते इसी से भटकते रहते हैं । शुद्ध हृदयके जीव इस खिंचाव की कशिश को, प्रणय-निमन्त्रण को पहिचानते हैं । उनको मालूम पड़ता है कि मेरे प्यारे प्रभु युग-युग से बाँह फैलाये अपने हृदय का द्वार उन्मुक्त किये प्रेम भरी चितवन से देखते हुए मुझे अपनी ओर आने को इशारा कर रहे हैं । यह सब देखकर वह भी दौड़कर, उड़कर, बँधे हुए बछड़े की तरह, पंखहीन पक्षी की तरह अपने परम प्रेमास्पद के पास एक ही साँस में, एक ही उड़ान में पहुँच जाना चाहता है । उसकी यह लालसा, उत्कण्ठा ही विरह-वेदना का रूप धारण कर लेती है और हर समय प्रीतम की ओर अग्रसर होने के लिये नवी व्यथा, नयी स्मृति, नयी कल्पनाओं और नये-नये अनुभवों को जन्म देती रहती है । यही भक्त का जीवन है । यही भक्त का भगवान् के लिये अभिसार है ।

श्रीस्वामी कोकिलजी की विरह व्यथा बढ़ने लगी उनपर भगवान् आकर्षण का इतना प्रभाव पड़ता, उनके शुद्ध हृदय में उसकी ऐसी गहरी अनुभूति होती मानो शरीर और हृत्पिण्ड उस खिंचाव के सहने में असमर्थ हैं । कलेजा फटने-सा लगता, शरीर पसीजने लगता, कण-कण बिखरने लगते, नस-नाड़ियों की गति और रुधिराभिसरण भी ऊर्ध्वमुखी हो जाता । नसें फूलकर ऊपर चढ़ जातीं । जीवन आँखों से बाहर छलक पड़ता ।

आँसू से कपड़े भीग जाते । शरीर की सुधि नहीं रहती । हा स्वामिनी ! हा श्रीजानकी !! कहते-कहते बेसुध होकर गिर पड़ते । कभी-कभी

विरहआवेश में सामने कोई दिव्य झाँकी देखकर दौड़ पड़ते, नाचते, गाते, हँसते, पुकारते, गुनगुनाते, बातचीत करते और ध्यानस्थ होकर चुपचाप बैठ जाते । कभी विरह की स्फूर्ति से व्याकुल हो उठते तो कभी संयोग की स्फूर्ति से आनन्दमग्न । मानो भगवान् अपने भक्त को प्रेम के झूले में बैठाकर संयोग और वियोग के झोटे दे रहे हों ।

परम पवित्र गंगावत् “पुष्करेक्षणी श्रीणरानन्दिनी, हमारी भविष्य स्वामिनी को देखो” बादलों कर छोड़ी हुई चान्दनी, चन्द्रमा से शोभित भई राणी कौशल्यादि माताएँ मंगल रूप खीर खवावत है और दिठोना लगावत है ॥४०॥ चतुर्थ सखी बोली

सजनी ! तुम अजान कैसे भी ? शीतल स्वाभाव वाली चन्द्रवदनि जनकनन्दिनी को पिखत ही शशि तप्तवान और मेचकवान भासत है । लोकपालों की प्यारी स्त्रियाँ शचि रती आदि छटा लखकर अनुगामिनी हैजात है । धी और ही और भावज्ञा और स्नेह अपने सुख और मान की विस्मृति, इत्यादि अलौकिक गुणों को देख, बीजुरि छटा सम तेजस्वी रूपकी धमक नेत्रों को बन्द करने वाली पेख, ब्रह्माणी उमा रमा भी श्रद्धा से सतीत्व पन्ने की गुरु रूप जानकर सांजुलि प्रणाम करत है ॥ सखी ! निज शोभन सौभाग्य को सराहो, भूतनिया भली स्वामिनी मिली है ॥४१॥ पंचम सखि बोली

मंगल नाम वाली, अति अभिराम पादपदम वाली, चमकत चन्द्र